इकाई 11 ध्वनि सम्प्रदाय : अवधारणा एवं प्रकार

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 ध्वनि का अर्थ

11.3 ध्वनि सिद्धांत : अवधारणा एवं स्वरूप

11.4 ध्वनि सिद्धांत के समर्थक आचार्य

11.5 ध्वनि के प्रकार

11.6 सारांश

11.7 अवधारणात्मक शब्द

11.8 उपयोगी पुस्तकें

11.9 बोध प्रश्न

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- ध्वनि का अर्थ समझ सकेंगे,
- ध्वनि सम्प्रदाय के बारे में जान सकेंगे,
- ध्वनि की अवधारणा एवं स्वरूप से परिचित हो सकेंगे, और
- ध्वनि के विभिन्न प्रकारों से भलीभाँति परिचित हो सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

'ध्वनि' शब्द की ही नहीं होती अपितु ध्वनि लोक में पद तथा अर्थ की प्रतीति कराने वाला तत्व हैं। आनन्दवर्धन ने अपनी रचना 'ध्वन्यालोक' के माध्यम से ध्वनि सम्प्रदाय का प्रतिपादन किया। आरंभ में 'ध्वन्यालोक' के रचयिता को लेकर भी विद्वानों में मतैक्य नहीं था किंतु कालान्तर में उस विवाद पर विराम लग गया और आचार्य आनन्दवर्धन को 'ध्वन्यालोक' का रचयिता होने के कारण आनन्दवर्धन निर्विवाद रूप से ध्वनि सम्प्रदाय के प्रवर्तक माने जाने लगे। ध्वनि को काव्यात्मा के रूप में स्थापित करने वाले आचार्य के रूप में आनन्दवर्धन की प्रतिष्ठा है। आनन्दवर्धन से पहले भी ध्वनि की चर्चा हुई किंतु उसका व्यवस्थिति विवेचन आनन्दवर्धन ने ही किया। ध्वनि का सीधा संबंध शब्द शक्तियों से है। इसीलिए शब्द शक्तियों के आधार पर ध्वनि का वर्गीकरण भी किया गया। इसी प्रकार रस और अलंकार के आधार पर भी ध्वनियाँ

BHDC-106.indd 138 19-03-2021 08:51:37

चिह्नित की गईं। ध्वनि सिद्धांत शैव दर्शन तथा स्फोट सिद्धांत से भी जुड़ा हुआ है। स्फोट ही ध्वनियों का आधार है। मंदिर के घंटे में होने वाला ध्वनि का अनुरणन ही शब्द का अर्थ व्यंजित करता है। रमणीय और चमत्कारपूर्ण अर्थ व्यंजित में वाली ध्वनियाँ ही वास्तव में श्रेष्ठ होती हैं। कुल मिलाकर ध्वनि व्याकरण तथा दर्शन दोनों स्तरों पर विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसकी महत्ता इन दोनों ही स्तरों पर मानी जाती है। भारतीय काव्यशास्त्र में ध्वनि सम्प्रदाय का उल्लेखनीय स्थान एवं महत्व है।

11.2 ध्वनि का अर्थ

ध्वनि शब्द का सामान्य अर्थ 'उच्चरित नाद' है। 'नाद एवं 'ध्वनि' सामान्यतः अर्थ की दृष्टि से एक दूसरे के पर्याय हैं। आनन्दवर्धन ने जिस ध्वनि सिद्धांत को स्वीकार किया है, वह व्याकरण और शैव दर्शन पर आधारित है :

'प्रथमो विद्वांसो हि वैयाकरणाः
ते च श्रूयमाणेबु वर्णेषु ध्वनिरिति व्यवहरन्ति।

अर्थात वैयाकरण श्रूयमाण वर्णों में ध्वनि का व्यवहार बताते हैं। श्रूयमाण वर्ण ही ध्वनि सिद्धांत का मूलाधार है। पतंजलि ने महाभाष्य में 'लोक में पद और अर्थ की प्रतीत कराने वाले 'श्रूयमान नाद' को ध्वनि कहा है।

पतंजलि ने ध्वनि सिद्धांत के लिए आधारभूत तत्व 'स्फोट' का उल्लेख किया है। स्फोट शब्द का आशय है– जिसमें अर्थ स्फुटित (प्रकट) हो, वह स्फोट है। ध्वनि ही अर्थ के स्फोट (प्राकट्य) का कारण है।

'नाद' और 'स्फोट' के बीच व्यंजक-व्यंग्य संबंध है। नाद् ध्वनि है और स्फोट स्फुटित शब्द या अर्थ। वैयाकरणों के अनुसार स्फोट नित्य शब्द है तथा ध्वनि श्रूयमाण शब्द है, जो अनित्य है। स्फोटवादियों से आनंदवर्धन ने ध्वनि शब्द को ग्रहण किया है किन्तु उसे साहित्यशास्त्र के अनुकूल बनाकर।

'ध्वनि' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग नवम् शताब्दी के मध्य कश्मीरी विद्वान आनंदवर्धन के युगांतकारी ग्रंथ 'ध्वन्यालोक' में मिलता है; यद्यपि इससे पूर्व भी ध्वनि तत्व चर्चा का विषय था क्योंकि स्वयं आनंदवर्धन ने एक स्थान पर लिखा है–

काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधैर्य : समान्नतापूर्व' : जिससे बात होता है कि ध्वनि की परंपरा उनसे पहले भी रही है, फिर भी आनंदवर्धन से पूर्व का कोई ग्रंथ न मिलने के कारण ध्वनि की प्रतिष्ठा एवं प्रवर्तन का श्रेय उन्हें ही दिया जाता है। ध्वनि संप्रदाय के अनुसार काव्य की आत्मा ध्वनि है तथा ध्वनि का संबंध व्यंजना शब्द से है।

आनंदवर्धन ने ध्वनि संबंधी स्थापना को विधि और निषेध दो रूपों में प्रस्तुत किया है। विधि रूप स्फोटवाद है और निषेध रूप में उन आचार्यों के मतों का खंडन है, जो अभिधा और लक्षणा से इतर व्यंजना शक्ति को नहीं मानते। स्फोटवादियों के अनुसार उच्चरित वर्णों की पूर्वापरता से श्रोता के मन में अनुभव का संस्कार उत्पन होता है और पद के अंतिम वर्ण के उच्चारण के बाद मन में स्थित पद और उसके बाद पदार्थ की प्रतीति होती है।

BHDC-106.indd 139 19-03-2021 08:51:37

11.3 ध्वनि सिद्धांत : अवधारणा एवं स्वरूप

भारतीय काव्य-संप्रदायों में ध्वनि संप्रदाय का स्थान अति महत्वपूर्ण है। आनंदवर्धन ने ध्वनि को ही काव्य की आत्मा माना और ध्वनि का संबंध व्यंजना शक्ति से स्वीकार किया। ध्वनि की परिभाषा देते हुए आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में लिखा है–

'वाच्यार्थ से अधिक रमणीय या चमत्कारक व्यंग्यार्थ को ध्वनि कहते हैं।'

जिस प्रकार शब्द के अलग-अलग वर्णों के उच्चारण से अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं होती है, उसी प्रकार अभिधा या लक्षणों के द्वारा भी संपूर्ण अर्थ और विशेष रूप से मार्मिक अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं होती। यह मार्मिक अर्थ व्यंजना द्वारा प्राप्त होता है। अभिधा और लक्षणा के उपरांत व्यंजना से ध्वनित होने वाला चमत्कारिक अर्थ ही ध्वनि है। यह ध्वनि ध्वन्यालोक कार ने अनुसरण के रूप में मानी है अर्थात् जिस प्रकार घंटे पर आघात करने से पहले टंकार, और फिर मधुर झंकार एक के बाद एक अधिक मधुर रूप में निकलती है, उसी प्रकार व्यंग्यार्थ भी ध्वनित होता है। इस प्रकार ध्वनित होने वाला व्यंग्यार्थ जहाँ पर प्रधान होता है, वहाँ ध्वनि मानी गई है। आनंदवर्धन ने लिखा है–

> 'यत्रार्थ : शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनीकृत स्वार्थौ
> व्यक्तः काण्यविशेषः स ध्वनिरिति सूरिभिः कथितः

जहाँ अर्थ स्वयं को तथा शब्द अपने अभिधेय अर्थ को गौण करके प्रतीयमान अर्थ को प्रकाशित करते हैं, उस काव्य विशेष को विद्वानों ने ध्वनि कहा है।'

इसका अभिप्रायः यह है कि ध्वनि में व्यंग्यार्थ तो होता ही है, किन्तु केवल इतना ही पर्याप्त नहीं है; उस प्रतीयमान अर्थ को वाच्यार्थ से अधिक महत्वपूर्ण होना भी अपेक्षित है। यहाँ दो बातें महत्वपूर्ण हैं –

1) अर्थ का अपने को गौण बनाना और शब्द का अपने को गौण बनाना।

2) एक अन्य अर्थ विशेष को व्यक्त (व्यंजित) करना। इसी व्यंजित होने वाले अर्थ को वे प्रतीयमान की संज्ञा देते हैं। इस प्रतीयमान का अर्थ है भासित या आलोकित अर्थ।

आचार्य मम्मट एवं पंडित राज जगन्नाथ उत्तमोत्तम काव्य रूप ध्वनि (काव्य) के लिए प्रायः आनंदवर्धन की ही पुनरावृत्ति करते हैं–

ध्वनि की यह परिभाषा, इस प्रकार दो अभिप्रायों से युक्त मानते हैं–

1) जहाँ शब्द एवं अर्थ अपने को अप्रधान बनाकर उस (प्रतीयमान व्यंग्य) अर्थ को व्यक्त करें, वह प्रतीयमान अर्थ विशेष ध्वनि है।

2) जहाँ वाच्यार्थ से व्यंग्यार्थ अतिशयित या उत्कर्ष प्रधान हो, वह ध्वनि है।

आनंदवर्धन प्रतीयमान अर्थ को ही ध्वनि मानते हुए कहते हैं कि महाकवियों की वाणी में वाच्यार्थ से भिन्न प्रतीयमान अर्थ कुछ और ही वस्तु है, जो प्रसिद्ध अलंकारों अथवा प्रतीत होने वाले अन्य गुणादि तत्वों से भिन्न सुन्दरियों के लावण्य के समान (अलंकारादि) से अलग ही प्रकाशित होता है जिस प्रकार सुंदरियों का सौंदर्य समस्त अंगों से पृथक दिखाई देता है, उसी प्रकार ध्वनि भी काव्य के सब रूपों में अपना पृथक् अस्तित्व रखता है।

BHDC-106.indd 140 19-03-2021 08:51:37

ध्वनि काव्य, वह विशिष्ट प्रकार का काव्य है जिसमें शब्द और अर्थ अपने स्वरूप को छिपाए हुए उस अर्थ को अभिव्यक्त करते हैं जो काव्य का परम रहस्य है। अतः यह विशिष्ट प्रकार का उत्तम काव्य है।

11.4 ध्वनि सिद्धांत के समर्थक आचार्य

अनेक आचार्यों ने ध्वनि सिद्धांत का प्रबल समर्थन किया जिनमें से निम्नलिखित प्रमुख हैं–

आचार्य अभिनवगुप्त ने ध्वन्यालोक पर 'लोचन' शीर्षक से एक प्रौढ़ टीका लिखकर ध्वनि के महत्व को निरूपित किया जो ध्वन्यालोकलोचन, काव्यलोक लोचन के नाम से प्रसिद्ध है।

ध्वनिवादी आचार्य मम्मट ने 11वीं शती में अपने अकाट्य तर्कों द्वारा यह मत प्रतिपादित किया कि व्यंजना का अंतर्भाव अभिधा और लक्षणा में नहीं हो सकता। यह स्वतंत्र शब्दवृत्ति है। व्यंजना पर आधारित ध्वनि-सिद्धांत की इन्होंने पूर्ण प्रतिष्ठा की है। इन्हें ध्वनि प्रस्थापक परमाचार्य कहा गया है।

पं. विश्वनाथ ने 14वीं शती में इस सिद्धांत का पोषण किया, इन्होंने 'साहित्य दर्पण' में ध्वनि और गुणीभूत व्यंग्य का विस्तृत विवेचन किया तथा ध्वनि और व्यंजना की महत्ता स्वीकार की। पं. विश्वनाथ रसवादी होते हुए भी ध्वनि-मत के प्रबल समर्थक आचार्य हैं।

पंडितराज जगन्नाथ ने 17वीं शती में ध्वनि सिद्धांत का पोषण करते हुए ध्वनि काव्य को उत्तमोत्तम काव्य कहा। इन्होंने रसादि ध्वनि को असंलक्ष्यक्रमहीन मानकर संलक्ष्यक्रम को भी स्वीकार किया, पं. जगन्नाथ ने ध्वनि के अनावश्यक भेदों को अमान्य घोषित कर इस सिद्धांत को अधिक व्यावहारिक बनाया। पं. जगन्नाथ ध्वनि प्रस्थान के अंतिम प्रौढ़ आचार्य हुए।

भोजराज ने श्रृंगार प्रकाश में ध्वनि का विवेचन किया तथा तात्पर्य शक्ति को ध्वनि से अभिन्न मानकर इसके अंतर्गत ही ध्वनि का विवेचन किया। इन्होंने तात्पर्य के तीन भेद किए–

अभिधीयमान, प्रतीयमान और ध्वनिरूप तात्पर्य। भोज तात्पर्य को ही काव्य में ध्वनि मानते हैं। इसके अनुसार ध्वनि या व्यंग्यार्थ, तात्पर्य से अभिन्न है।

ध्वनि के प्रवर्तक आचार्य आनंदवर्धन ने स्वीकार किया कि ध्वनिकाव्य सर्वोत्तम काव्य है। गुणीभूत व्यंग्य मध्यम काव्य है तथा व्यंग्यहीन काव्य अवर या अश्रेष्ठ कार्य है।

इस प्रकार वाच्यार्थ से अधिक उत्कृष्ट व्यंग्य ही विद्वानों के द्वारा ध्वनि कही गयी है। ध्वनिकाव्य का संबंध वाच्यार्थ व्यंग्यार्थ से है अतः ध्वनि के स्वरूप को समझने के लिए शब्दशक्ति को जानना आवश्यक है।

11.5 ध्वनि के प्रकार

भारतीय शास्त्रों में भाषा का अर्थ सूचित करने की क्षमता को शक्ति या वृत्ति के नाम से पुकारा गया है।

BHDC-106.indd 141 19-03-2021 08:51:37

शब्द शक्तियाँ

शब्द, पद और वाक्य

महाभाष्य का कथन है कि प्रतीतपदार्थ को लोके ध्वनि : शब्द इत्युच्ते।

स्थूल रूप में शब्द का अर्थ ध्वनि, वाक्य, पद कथन आदि भी होता है। शब्द की शक्ति असीम है। जिस शक्ति के द्वारा शब्द का अर्थगत प्रभाव पड़ता है वही शब्द शक्ति कहलाती है या शब्द का अर्थ बोध कराने वाली शक्ति ही शब्दशक्ति है। शब्दशक्तियाँ तीन हैं–

1) अभिधा

2) लक्षणा

3) व्यंजना।

इनके संबंध से तीन प्रकार के शब्द होते हैं– वाचक, लक्षक और व्यंजक। तीन प्रकार के अर्थ होते हैं– वाच्यार्थ, लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ।

1) अभिधा : वह शब्द शक्ति जिससे मुख्य अर्थ का बोध होता है अभिधा कही जाती है। जिस शब्द से मुख्यार्थ का बोध हो वह वाचक कहलाता है तथा उससे निकलने वाला मुख्यार्थ वाच्यार्थ होता है। अभिधा के द्वारा तीन प्रकार के शब्दों की अभिव्यक्ति होती है–

1) रूढ़ 2) यौगिक 3) योगरूढ़।

रूढ़ : ऐसे शब्द जिसकी कोई व्युत्पत्ति न हो, जैसे– पशु।

यौगिक : जिसकी व्युत्पत्ति हो और जो प्रकृति प्रत्यय के योग से बनते हैं। जैसे –पशुतुल्य।

योगरूढ़ : वे शब्द जो यौगिक होते हैं फिर भी उनका अर्थ रूढ़ हो जैसे– पशुपति।

2) लक्षणा : मुख्यार्थ में बाधा होने पर रूढ़ि या प्रयोजन के सहारे, उससे संबंधित, जहाँ पर अन्य अर्थ लक्षित होता है वहाँ पर लक्षणा शक्ति होती है। उदाहरण– 'मेरा कुत्ता शेर है। यहाँ मुख्यार्थ बाधित होता है। कुत्ता, शेर कैसे हो सकता है, किंतु प्रयोजन से अर्थ निकला कि आवाज में और भयंकरता में शेर समान है।

3) व्यंजना : व्यंजना से आशय विशेष रूप से स्पष्ट करना। साहित्य दर्पणकार पं. विश्वनाथ के शब्दों में अपना-अपना अर्थ बोधन करके अभिधा आदि वृत्तियों के शांत होने पर जिससे अन्य अर्थ का बोधन होता है, वह शब्द में तथा अर्थादिक में रहने वाली वृत्ति व्यंजना कहलाती है।

यह वह शक्ति है, जो बाह्य सौंदर्य के रेशमी पर्दे को हटाकर काव्य के वास्तविक लावण्य को व्यक्त करती है, उसे व्यंजना कहते हैं। उदाहरणार्थ– ऑफिस में बैठा हुआ कोई अधिकारी अपने क्लर्क से कहे 'मैं जा रहा हूँ' तो उसका अर्थ हुआ कि अब ऑफिस का काम तुम सम्हालो। वस्तुतः इसी व्यंजना शक्ति का ध्वनि संप्रदाय में सर्वाधिक महत्व है।

BHDC-106.indd 142 19-03-2021 08:51:37

व्यंजना के भेद

शब्द और अर्थ दोनों ही का व्यापार व्यंजना में रहता है। इस कारण व्यंजना के दो रूप हैं –

1) शाब्दी व्यंजना 2) आर्थी व्यंजना

1) **शाब्दी व्यंजना** : यहाँ शब्द की प्रधानता हैं अर्थात् शब्द विशेष के कारण व्यंग्यार्थ निकलता है। यह दो प्रकार की होती है–

   क) अभिधामूलाशाब्दी व्यंजना

   ख) लक्षणामूलाशाब्दी व्यंजना

2) **आर्थी व्यंजना** : जहाँ पर कोई भी शब्द क्यों न हो किन्तु अर्थ में अंतर नहीं पड़ता वहाँ आर्थी व्यंजना होती है। यह शब्द शक्ति वक्ता, वाक्य आदि की विशेषता के कारण व्यंग्यार्थ की प्रतीति कराती है।

व्यंजना की प्रधानता के आधार पर ध्वनि सिद्धांत के अंतर्गत काव्य के तीन भेद किए हैं–

1) ध्वनि

2) गुणीभूत व्यंग्य

3) अवर

जहाँ वाच्यार्थ से अधिक महत्वपूर्ण व्यंग्यार्थ हो वह ध्वनि काव्य है।

जहाँ वाच्यार्थ की अपेक्षा व्यंग्यार्थ कम चमत्कार हो, वह गुणीभूत व्यंग्य काव्य होता है।

जहाँ व्यंग्यार्थ नहीं होता है वह अवरकाव्य है। इन तीनों में ध्वनिकाव्य उत्तम, गुणीभूत व्यंग्यकाव्य मध्यम तथा अवर काव्य को साधारण माना जाता है।

लक्षणामूला ध्वनि (अविवक्षित वाच्य ध्वनि)

जिसके मूल में लक्षणा हो अर्थात् लक्ष्यार्थ से व्यंग्यार्थ की प्रतीति होती है यहाँ व्यंग्यार्थ लक्ष्यार्थ पर आश्रित रहता है अतः यह लक्षणामूला ध्वनि कहलाती है। इसके दो भेद हैं–

1) अर्थान्तर संक्रमित

2) अत्यंततिरस्कृत

1) अर्थांतर संक्रमित वाच्य ध्वनि

जिस ध्वनि में वाच्यार्थ अपना पूर्ण तिरोभाव न करके अपना अर्थ रखते हुए भी अन्य अर्थ में संक्रमण करता है वह अर्थांतर संक्रमित ध्वनि है। उदाहरण– तो क्या अबलाएँ सदैव अबलाएँ ही हैं बेचारी। यहाँ दूसरी बार 'अबला' शब्द अपने मुख्यार्थ स्त्री में बाधित होकर अपने इस लाक्षणिक अर्थ को प्रकट करता है कि वे अबलाएँ हैं अर्थात् निर्बल हैं। इससे यह ध्वनित होता है कि उनके सदा पराधीन, आत्मरक्षा में असमर्थ या दया का पात्र नहीं होना चाहिए। यहाँ जो लक्ष्यार्थ किया जाता है वह वाच्यार्थ का रूपांतर मात्र है।

BHDC-106.indd 143 19-03-2021 08:51:37

2) अत्यंत तिरस्कृत वाच्य ध्वनि

जिस ध्वनि में वाच्यार्थ का सर्वथा त्याग हो जाता है वह अत्यंत तिरस्कृत वाच्य ध्वनि है। यह लक्षण, लक्षणा पर आधारित है। यथा–

'सकल रोओं से हाथ पसार, लूटता इधर लोभ गृह-द्वार' यहाँ वाच्यार्थ सर्वथा बाधित है। रोओं से लोभ का हाथ पसारना और घर-द्वार लूटना, एकदम असंभव है। लक्ष्यार्थ है लोभी का समस्त कोमल और कठोर साधनों से परकीय द्रव्य को आत्मसात् करना। इससे प्रयोजनरूप व्यंग्य है– लोभ या तृष्णा का आत्मतृप्ति के लिए दैन्य प्रदर्शन या बलात् सब कुछ कर सकने की क्षमता। इससे पदार्थ का अर्थ अत्यंत तिरस्कृत हो जाता है।

अभिधामूलाध्वनि (विवक्षितान्य परवाच्य ध्वनि)

जिसके मूल में अभिधा अर्थात् वाच्यार्थ संबंध हो अर्थात् अभिधामूला में सीधे अभिधेय अर्थ से ही व्यंग्यार्थ ध्वनित होता है इस ध्वनि में व्यंग्यार्थ वाच्यार्थ पर आश्रित रहता है। इसके दो भेद हैं –

1) संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि

2) असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि या रस ध्वनि

संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि : जहाँ अभिधा द्वारा वाच्यार्थ का स्पष्ट बोध होने पर क्रम से व्यंग्यार्थ संलक्षित हो वहाँ संलक्ष्यक्रम व्यंग्य-ध्वनि होती है। इसे अनुरणन ध्वनि भी कहा जाता है। अनुरणन का अर्थ है, पीछे से होने वाली गूंज। जिस प्रकार घंटे पर चोट करने से टंकार के बाद झंकार सूक्ष्म से सूक्ष्म स्पष्ट सुनाई पड़ती है, उसी प्रकार इस ध्वनि में वाच्यार्थ से व्यंग्यार्थ भी स्पष्ट होता है। इसके तीन प्रधान भेद माने जाते हैं–

1) शब्दशक्ति उद्‌भव अनुरणन ध्वनि

2) अर्थशक्ति उद्‌भव अनुरणन ध्वनि

3) शब्दार्थभियशक्ति उद्‌भव अनुरणन ध्वनि

शब्दशक्ति उद्‌भव अनुरणन ध्वनि

जब वाच्यार्थ-बोध होने के बाद व्यंग्यार्थ का बोध जिस शब्द द्वारा होता है, उसके बोध कराने की शक्ति केवल उसी शब्द में हो, उसके पर्यायवाची शब्द में नहीं, तब शब्दोद्‌भव अनुरणन ध्वनि होती है। इसके चार भेद हैं–

क) पदगत वस्तु ध्वनि

ख) वाक्यगत वस्तु ध्वनि

ग) पदगत अलंकार ध्वनि

घ) वाक्यगत अलंकार ध्वनि

पदगत वस्तु ध्वनि का उदाहरण निम्नलिखित है–

जो पहाड़ को तोड़ फोड़कर राह बनाता
जीवन निर्मल वही, सदा जो आगे बढ़ता

BHDC-106.indd 144 19-03-2021 08:51:37

पहाड़ से निकलने वाला जीवन (पानी) निर्मल होता है– यह वाच्यार्थ हुआ। जीवन शब्द के श्लिष्ट होने से यह व्यंग्यार्थ निकला कि वही मनुष्य पवित्र व गतिशील है जो पहाड़ जैसी विपत्तियों को रौंदकर आगे बढ़ता हैं, यहाँ 'जीवन' शब्द से मानव जीवन का बोध हुआ, वह वस्तु रूप ही है। अतः यहाँ भी जीवन पद में होने से यह ध्वनि पदगत है।

2) वाक्यगत शब्दशक्ति मूलक संलक्ष्यक्रम अलंकार ध्वनि का उदाहरण निम्नवत है–

चरन धरत चिंता करत भोर न भावे सोर
सुबरन को ढूंढत फिरत कवि, व्यभिचारी, चोर

यहाँ चरन, चिंता, भोर, सोर, सुबरन श्लिष्ट हैं तथा कवि, व्यभिचारी, चोर, इन तीनों के क्रियायुक्त होकर विशेषण होते हैं। जैसे सुबरन का कवि के साथ सुंदर वर्ण, व्यभिचारी के पक्ष में सुंदर रंग, और चोर के साथ सोना, तीनों ढूंढते रहते हैं।

3) अलंकार ध्वनि

जहाँ विशिष्ट शब्द प्रयोग के कारण प्रधान रूप से अलंकार का बोध हो, उसे अलंकार ध्वनि कहा जाता है।

बंदौ मुनि पद कंज, रामायन जेहिं निरभयउ
सखर सुकोमल मंजु, दोष रहित दूषन सहित

वस्तु ध्वनि वाल्मीकि के महत्व का प्रतिपादन है। यह रामाण स्वर–दूषण की कथा से युक्त है किन्तु सखर सुकोमल एवं दोष रहित दूषण सहित में विरोधाभास अलंकार व्यंग्य है। (सखर से अत्यंत कर्कश एवं खर की कथा सहित तथा दूषण सहित अर्थात दोषयुक्त या खर के भाई दूषण की कथा के साथ) इसमें दोनों अर्थ दो विशिष्ट शब्दों पर आधारित विरोधाभास अलंकार को व्यक्त करते हैं अतः यहाँ शब्दशक्ति उद्भव के अंतर्गत अलंकार ध्वनि है।

अर्थशक्ति उद्भव अनुरणन ध्वनि (स्वतः संभवी)

जहाँ शब्द परिवर्तन के बाद भी अर्थात् उन शब्दों के पर्यायवाची शब्दों के द्वारा भी व्यंग्यार्थ का बोध होता रहे, वहाँ अर्थशक्ति उद्भव अनुरणन ध्वनि होती हैं–

इसके मुख्य तीन भेद हैं–

1) स्वतः संभवी

2) कवि प्रौढ़ोक्ति

3) कवि निबद्धमान पात्र प्रौढ़ोक्ति सिद्ध

इनमें से प्रत्येक के चार भेद होते हैं–

क) वस्तु से वस्तु ध्वनि

ख) वस्तु से अलंकार ध्वनि

ग) अलंकार से वस्तु ध्वनि

घ) अलंकार से अलंकार ध्वनि

BHDC-106.indd 145 19-03-2021 08:51:37

वस्तु से वस्तु ध्वनि उदाहरण–

कोटि मनोज लजावन हारे। सुमुखि! कहहु को आहिं तुम्हारे
सुनि सनेहमय मंजुलबबानी, सकुचिसीय मन महँ मुसुकानी।

ग्रामवधुओं के प्रश्न को सुनकर सीता का संकोच करना और मुस्कराने में 'राम' का पति होना व्यंग्य है। अतः यहाँ पर वस्तु से वस्तु ध्वनि है।

वस्तु से अलंकार ध्वनि

लिख पढ़ पद पायो बड़ो, भयो भोग लवलीन
जगज स बाढ्यो तो कहाँ, जो न देस-रति कीन।

यहाँ पर 'पद पाना' वस्तु रूप वाच्यार्थ द्वारा देशभक्ति के बिना ये सब उन्नतियाँ व्यर्थ हैं, यह व्यंग्यार्थ निकल रहा है अतः यहाँ वस्तु रूप से विनोक्ति अलंकार व्यंग्य है।

अलंकार से वस्तु व्यंग्य

झर पड़ता जीवन डाली से मैं पतझड़ का-सा जीर्ण पात
केवल-केवल जग-आंगन में लाने फिर से मधु का प्रभात।

यहाँ उपमा और रूपक अलंकार द्वारा यह वस्तु व्यंग्य निकलता है कि मरण नवजीवन लाता है क्योंकि पुनर्जन्म निश्चित है। अतः यहाँ अलंकार से वस्तु व्यंग्य है।

अलंकार से अलंकार ध्वनि

दमकत दरपन दरप दरि दीप-सिखा-दुति देह
वह दृढ़ इक दिसि दिपत, यह मृदु दस दिसनि, सनेह।

यहाँ दीप सिखादुति में उपमालंकार है और बाद में व्यतिरेकालंकार है क्योंकि द्युति को दीपशिखा के उपमान से न बांधा जाता तो दर्पण में इसमें विशेषता न आती और न ही व्यतिरेक को प्रश्रय मिलता।

1) स्वतः संभवी

2) कवि प्रौढ़ोक्ति : जो वस्तु केवल कवियों की कल्पना मात्र से ही सिद्ध होती है, व्यावहारिक रूप से उसकी प्रत्यक्ष सिद्धि न हो जैसे– कलंक का रंग काला मानना, विरह में जलना, धन का काला होना।

3) कविनिबद्धमान पात्र प्रौढ़ोक्ति सिद्ध

जहाँ कवि के निबद्धमान पात्र की प्रौढ़ (कल्पित) उक्ति द्वारा किसी वस्तु या अलंकार का व्यंग्य बोध होता है। यथा–

धूम धुआंरे काजर कारे हम ही बिकरारे बादर
बदनराज के वीर बहादुर पावस के उड़ते फणधर।

यहाँ बादल को पावस के उड़ते फणधर तथा मदनराज के वीर बहादुर आदि वाच्य कवि निबद्धमान पात्र प्रौढोक्ति है, बादलों का अपने को कामोद्दीपक, विरहणी के संतापकारक कहना, वस्तु रूप व्यंग्य का बोध कराता है।

BHDC-106.indd 146 19-03-2021 08:51:38

असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि या रस ध्वनि

जहाँ पर वाच्यार्थ ग्रहण करने का क्रम लक्षित नहीं होता कि यह वाच्यार्थ है और उसके बाद यह व्यंग्यार्थ है वहाँ यह ध्वनि होती है। आचार्य आनंदवर्धन ने इसे शतपत्रसूचीभेद से समझाया है कि जिस प्रकार कमल में यह निश्चित करना अनिश्चित है कि कौन सा पत्र सूचिका द्वारा कब बिद्ध हुआ, जबकि बिद्ध होना अनिवार्यता है। उसी प्रकार किसी रचना को पढ़कर विभावनुभावसंचारी के संयोग से पाठक के मन में कब रस उत्पन्न हुआ यह कहना कठिन है, किन्तु रस निष्पत्ति हुई यह वास्तविकता है। अर्थात् रस की प्रतीति में क्रम जरूरी है किन्तु यह लक्षित करना की कब हुई रसनिष्पत्ति यह असंभव है।

इस असंलक्ष्य क्रम ध्वनि के आठ भेद हैं–

रस, भाव, रसाभास, भावाभास, भावशबलता, भावोदय, भावसनिध, भावशान्ति।

उदाहरणार्थ–

पलंग पीठ तजि गोद हिंडोरा।
सिय न दीन पग अवनि कठोरा।।
सो बन बसिहि तात केहि भाँती।।
चित्र लिखित कपि देखि डेराती।।

यहाँ वाच्यार्थ के साथ व्यंग्यार्थ रूप इस प्रकट हुआ है। आलंबन सीता है। उद्दीपन उनकी कोमलता स्थायीभाव शोक है। संचारी चिंता, मोह आदि। यहाँ करुण रस की अभिव्यक्ति हुई है।

गुणीभूत व्यंग्य

जहाँ व्यंग्य अर्थ, वाच्य अर्थ से उत्तम न हो अर्थात् वाच्य अर्थ के समान ही हो या उससे कम हो वहाँ गुणीभूत व्यंग्य होता है।

गुणीभूत व्यंग्य के आठ भेद किए गए हैं–

1) अगूढ़ 2) अपरांग व्यंग्य 3) वाच्य सिद्धयंग व्यंग्य 4) अस्फट व्यंग्य 5) संदिग्ध प्राधान्य व्यंग्य 6) तुल्य प्राधान्य व्यंग्य 7) काक्वाक्षिप्त व्यंग्य 8) असुंदर व्यंग्य

अगूढ़ व्यंग्य : जो व्यंग्य स्पष्ट होने के कारण वाच्य सा प्रतीत हो वह अगूढ़ गुणीभूत व्यंग्य है–

पुत्रवती जुबती जग सोई
रामभक्त सुत जाकर होई।

वहीं युवती पुत्रवती है जिनके पुत्र रामभक्त हैं। लक्ष्यार्थ है कि जिनके पुत्र रामभक्त नहीं है उनका पुत्रवती होना, न होने के बराबर है। व्यंग्यार्थ है– रामभक्त पुत्रवाली युवती ही संसार में वंदनीय हैं।

अपरांग व्यंग्य : जो व्यंग्य अर्थ किसी दूसरे अर्थ का अंग हो जाता है अर्थात् जहाँ रस, भाव, भावाभास आदि एक दूसरे के अंग हो जाते हैं, वहाँ पर अपरांग व्यंग्य है।

'कप किसोरी दरसि कै, खरे जलाने लाल

BHDC-106.indd 147 19-03-2021 08:51:38

यहाँ सात्विक भाव 'कप' द्वारा व्यजित रति या शृंगार रस 'लज्जा' संचारी का अंग हो गया है।

वाच्यसिद्धयंग व्यंग्य : जहाँ अपेक्षित व्यंग्य से वाच्य सिद्धि होती है वहाँ वाच्यसिद्धयंग व्यंग्य होता है। कवि निराला की जुही की कली में यही व्यंग्य है।

अस्फुट व्यंग्य : जहाँ व्यंग्य को समझना कठिन हो, श्रमसाध्य हो, वह अस्फुट व्यंग्य है।

संदिग्ध प्राधान्य व्यंग्य : वाच्यार्थ और व्यंग्यार्थ में किसकी प्रधानता है, इसका संदेह हो वहाँ संदिग्ध प्राधान्य व्यंग्य होता है–

थके नयन रघुपति छवि देखी।
पलकनहूँ परिहरी निमेशी।
अधिक सनेह देह भइ भोरी।
सरद ससिहिं जनु चितव चकोरी।

राम की छवि देख सीता स्नेह से विभोर हो गई। जैसे शरद चंद्र को देख चकोरी होती है। यहाँ वाच्यार्थ का चमत्कार अधिक है या देह भई भोरी में जड़ता संचारी भाव का। अतः संदेह होने के कारण संदिग्ध प्रधान्य व्यंग्य है।

असुंदर व्यंग्य : जहाँ व्यंग्यार्थ की अपेक्षा वाच्यार्थ अधिक सुंदर हो। यथा–

बैठी गुरुजन बीच में, सुनि मुरली की तान

मुरली की तान सुनकर गुरुजन के बीच बैठी युवती मन मसोसकर रह जाती है। यह वाच्यार्थ है। व्यंग्यार्थ है। मुरली सुनकर भी गोपिका कृष्ण से मिलने में असमर्थ है। अतः यहाँ वाच्यार्थ अधिक सुंदर है।

तुल्य प्राधान्य व्यंग्य : जहाँ व्यंग्यार्थ और वाच्यार्थ दोनों की प्रधानता समान हो वहाँ तुल्य प्राधान्य व्यंग्य होता है। यथा– आज बचपन का कोमल गात, जरा का पीला पात बचपन का सुदंर कलेवर, बुढ़ापे में पीले पात का सा असुंदर हो जाता है। व्यंग्यार्थ है– संसार में सब दिन समान नहीं होते।

काक्वाक्षिप्त व्यंग्य : जहाँ कंठगत विशेष ध्वनि के द्वारा व्यंग्य प्रकट होता है यथा– पंचानन के गुहा द्वार पर रक्षा किसकी ?

किसी की रक्षा नहीं। यह काकु द्वारा आक्षिप्त व्यंग्य है।

अवर काव्य : चित्र काव्य : ध्वनिकार के मत में यह तीसरे प्रकार का काव्य है जिसमें व्यंग्यार्थ नहीं रहता। केवल अलंकार, शब्द योजना आदि का सौंदर्य देखा जाता है। ध्वनि की दृष्टि में इस काव्य का सबसे कम महत्व है।

ध्वनि काव्य की आत्मा के रूप में

ध्वनि सिद्धांतकार आचार्य आनंदवर्धन ने जहाँ काव्य में वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ से अधिक रमणीय और चमत्कार पूर्ण अर्थ व्यंजित हो, वहाँ ध्वनि की सत्ता मानी है। जिस प्रकार किसी सुंदरी के अंग-प्रत्यंग के सौंदर्य से भिन्न लावण्य की पृथक् सत्ता विद्यमान रहती है, उसी प्रकार महाकवियों की वाणी में वाच्य अर्थ से भिन्न कुछ चमत्कारपूर्ण अर्थ होता है। यह प्रतीयमान अर्थ ही ध्वनि है। यही ध्वनि काव्य की आत्मा है।

BHDC-106.indd 148 19-03-2021 08:51:38

अलंकारिकों ने माना है कि काव्य में अकथित और प्रतीयमान अर्थ ही मूल वस्तु है। इसका बोध अभिधा और लक्षणा से नहीं हो पाता है। व्यंजना शक्ति ही काव्य के गूढ़ार्थ का बोध करा सकती है।

ध्वनि सिद्धांत की स्थापना के साथ भारतीय काव्य, चिंतन की सूक्ष्मतम स्थित तक पहुँच गया है।

11.6 सारांश

ध्वनि सिद्धांत एक सार्वजनीन सिद्धांत है और काव्य के मूल तत्व को अधिक सफलतापूर्वक आत्मसात किए है।

इसमें कविता का लक्ष्य अर्थ बोध मात्र नहीं है, किंतु परिशीलक में संवेदना जगाना और उनके हृदय का विस्तार कर उसे विश्व हृदय में मिला देना भी है। ध्वनि सिद्धांत की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि इसने अपने अंतर्गत रस, अलंकार, वक्रोक्ति, रीति आदि समस्त काव्य सिद्धांतों के मूल तत्वों का समावेश कर लिया, इसके साथ ही इसका प्रतिपादन भी विस्तार के साथ हुआ है। खंडन मंडन द्वारा यह अति पुष्ट होकर एक सर्वमान्य काव्य सिद्धांत के रूप में प्रतिष्ठित हुआ है। इसके असंख्य भेद-प्रभेद हैं और यह काव्य की व्यापक से व्यापक और सूक्ष्म से सूक्ष्म विशेषताओं को अपने में समेट लेता है।

11.7 अवधारणात्मक शब्द

स्फोट : स्टोफ को स्फुटित शब्द या अर्थ माना जाता है। वैयाकरणों के अनुसार स्फोट नित्य शब्द है तथा ध्वनि श्रूयमाण और अनित्य शब्द है।

गुणीभूत व्यंग्य : जहाँ व्यंग्य अर्थ वाच्य अर्थ से श्रेष्ठ अथवा उत्तम नहीं होता अर्थात् वाच्यार्थ के समान ही होता है अथवा उससे कमतर होता है वहाँ गुणीभूत व्यंग्य होता है। गुणीभूत व्यंग्य के आठ भेद किए गए हैं।

अलंकार ध्वनि : जहाँ विशिष्ट शब्द प्रयोग के कारण मुख्य रूप से अलंकार का बोध होता है उसे अलंकार ध्वनि कहा जाता है।

लक्षणामूलाध्वनि : जिसके मूल में लक्षणा हो अर्थात् लक्ष्यार्थ से व्यंग्यार्थ की प्रतीति होती हो और व्यंग्यार्थ लक्ष्यार्थ पर आश्रित हो वह लक्षणामूलाध्वनि कहलाती है। इसके दो भेद हैं।

कवि प्रौढ़ोक्ति : जो वस्तु केवल कवियों की कल्पना से ही सिद्ध होती है, व्यावहारिक रूप से उसकी प्रत्यक्ष सिद्धि नहीं होती उसे कवि प्रौढ़ोक्ति कहा जाता है। कलंक का रंग काला मानना, विरह में जलना, धन का काला होना इसके उदाहरण हैं। प्रत्यक्षतः ऐसा नहीं होता।

11.8 उपयोगी पुस्तकें

भारतीय काव्यशास्त्र का इतिहास– भगीरथ मिश्र

भारतीय काव्यशास़्त्र की परंपरा– डॉ. नगेन्द्र

BHDC-106.indd 149 19-03-2021 08:51:38

भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका– योगेन्द्र प्रताप

भारतीय काव्यशास्त्र– निशा अग्रवाल

भारतीय काव्यशास्त्र के नये क्षितिज– रामनाथ त्रिपाठी

काव्यदर्पण– पं. रामदहिन मिश्र

11.9 बोध प्रश्न

1) ध्वनि की अवधारणा एवं स्वरूप पर प्रकाश डालिए।

2) लक्षणा मूलक ध्वनि की चर्चा कीजिए।

3) गुणीभूत व्यंग्य की चर्चा कीजिए।

4) ध्वनि के अर्थ एवं महत्व पर प्रकाश डालिए।

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) देखिए भाग 13.3

2) देखिए भाग 13.4

3) देखिए भाग 13.4

4) देखिए भाग 13.2 तथा भाग 13.1

BHDC-106.indd 150 19-03-2021 08:51:38